धर्मवीर भारती 13

जन्म *: सन् 1926, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)*
प्रमुख रचनाएँ *: कनुप्रिया, सात-गीत वर्ष, ठंडा लोहा (कविता संग्रह); बंद गली का आखिरी मकान (कहानी-संग्रह); सूरज का सातवाँ घोड़ा, गुनाहों का देवता (उपन्यास); अंधा युग (गीतिनाट्य); पश्यंती, कहनी-अनकहनी, मानव मूल्य और साहित्य, ठेले पर हिमालय (निबंध-संग्रह)*
प्रमुख सम्मान *: पद्‌मश्री, व्यास सम्मान एवं साहित्य के कई अन्य राष्ट्रीय पुरस्कार*
निधन *: सन् 1997*
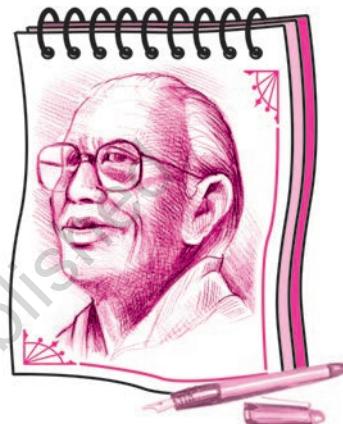
अपनी सहज प्रवृत्तियों को मारो मत, लेकिन उनके दास भी न बनो। जीवन के सहज प्रवाह में उन्हें आने दो, फलीभूत होने दो। पर यदि वे निरंकुशता से हावी होने लगें तो उन्हें भस्म कर देने की तेजस्विता और आत्मनियंत्रण भी रखो।

गुनाहों का देवता *उपन्यास से लोकप्रिय धर्मवीर भारती का आज़ादी के बाद के साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान है। उनकी कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास, निबंध, गीतिनाट्य और रिपोर्ताज हिंदी साहित्य की उपलब्धियाँ हैं। भारती जी के लेखन की एक खासियत यह भी है कि हर उम्र और हर वर्ग के पाठकों के बीच उनकी अलग-अलग रचनाएँ लोकप्रिय हैं। वे मूल रूप से व्यक्ति स्वातंत्र्य, मानवीय संकट एवं रोमानी चेतना के रचनाकार हैं। तमाम सामाजिकता एवं उत्तरदायित्वों के बावजूद उनकी रचनाओं में व्यक्ति की स्वतंत्रता ही सर्वोपरि है। रुमानियत उनकी रचनाओं में संगीत में लय की तरह मौजूद है। उनका सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यास* ***गुनाहों का देवता*** *एक सरस और भावप्रवण प्रेम कथा है। दूसरे लोकप्रिय उपन्यास* ***सूरज का सातवाँ घोड़ा*** *पर हिंदी फ़िल्म भी बन चुकी है। इस उपन्यास में प्रेम को केंद्र में रखकर निम्न मध्यवर्ग की हताशा, आर्थिक संघर्ष, नैतिक विचलन और अनाचार को चित्रित*

*किया गया है। स्वतंत्रता के बाद गिरते हुए जीवन मूल्य, अनास्था, मोहभंग, विश्वयुद्धों से उपजा हुआ डर और अमानवीयता की अभिव्यक्ति **अंधा युग** में हुई है। **अंधा युग** गीतिसाहित्य के श्रेष्ठ गीतिनाट्यों में है। मानव मूल्य और साहित्य पुस्तक समाज-सापेक्षिता को साहित्य के अनिवार्य मूल्य के रूप में विवेचित करती है।*

*इन विधाओं के अलावा भारती जी ने निबंध और रिपोर्ताज भी लिखे। उनके गद्य लेखन में सहजता और आत्मीयता है। बड़ी-से-बड़ी बात वो बातचीत की शैली में कहते हैं और सीधे पाठकों के मन को छू लेते हैं। एक लंबे समय तक हिंदी की साप्ताहिक पत्रिका **धर्मयुग** (फ़िलहाल प्रकाशन बंद है) के संपादक रहते हुए हिंदी पत्रकारिता को सजा-सँवारकर गंभीर पत्रकारिता का एक मानक बनाया।*

*यहाँ प्रस्तुत संस्मरण **काले मेघा पानी दे** में लोक-प्रचलित विश्वास और विज्ञान के द्वंद्व का सुंदर चित्रण है। विज्ञान का अपना तर्क है और विश्वास का अपना सामर्थ्य। इसमें कौन कितना सार्थक है, यह प्रश्न पढ़े-लिखे समाज को उद्वेलित करता रहता है। इसी दुविधा को लेकर लेखक ने पानी के संदर्भ में प्रसंग रचा है। आषाढ़ का पहला पखवारा बीत जाने के बाद भी खेती और बहुकाज प्रयोग के लिए पानी न हो तो जीवन चुनौतियों का घर बन जाता है और उन चुनौतियों का निराकरण विज्ञान न कर पाए तो उत्सवधर्मी भारतीय समाज चुप नहीं बैठता। वह किसी जुगाड़ में लग जाता है, प्रपंच रचता है और हर कीमत पर जीवित रहने के लिए अशिक्षा और बेबसी के भीतर से उपाय और काट की खोज करता है।*

लेखक ने अपने किशोर जीवन के इस संस्मरण में दिखलाया है कि अनावृष्टि दूर करने के लिए गाँव के बच्चों की इंदर सेना द्वार-द्वार पानी माँगते चलती है और लेखक का तर्कशील किशोर मन भीषण सूखे में उसे पानी की निर्मम बरबादी के रूप में देखता है। इसे किशोर मन का वितर्क नहीं, वैज्ञानिक तर्क ही कहना चाहिए और विज्ञान विषय की इतने दीर्घकाल तक पढ़ाई और विज्ञानोपलब्ध आविष्कारों से अपने जीवन को भौतिक सुख-सुविधाओं से भरते रहने के बावजूद इस देश के जनमानस में ऐसी वैज्ञानिक दृष्टि का न जनम पाना अफ़सोसनाक ही कहा जा सकता है। पर जनता के सामूहिक चित्त में बैठे विश्वासों का क्या करें, जिन से संचालित होने वाले कुछ लौकिक कर्मकांड संस्कृति की घटना के रूप में हमें लगते हैं। यदि वे विश्वास प्रत्यक्षत: जानलेवा या नस्ल-जाति, मज़हब और लिंग के आधार पर किसी समुदाय के लिए अपमानजनक हों, तब तो उन्हें अंधविश्वास कहकर उनका शीघ्रातिशीघ्र निराकरण ही एकमात्र कर्तव्य है, पर यदि कुछ विश्वास विज्ञानसम्मत न होकर भी उक्त तरह से हानिकर न हों तो उनके साथ भी उसी प्रकार का बर्ताव क्या उचित है? ऐसा करने में क्या हमारे सांस्कृतिक मन के खाली-खाली हो जाने का खतरा नहीं है?

विश्वास की भी तो एक रचनात्मक भूमिका हो सकती है आपातकाल में निराशा दूर करने या अधीरता को थामने अथवा विभक्त जन-चेतना को जोड़ने के अर्थ में। अब सवाल रह जाता है कि बारिश के लिए किए जाने वाले उक्त भोले प्रयत्न किस कोटि के अंतर्गत हैं? लेखक ने कोई निर्णय नहीं दिया है। पर एक बात स्पष्ट होती है कि जीजी की संतुष्टि और अपने प्रति उनका सद्‌भाव बचाए रखने के लिए वह उन तमाम रीति-रिवाजों को ऊपरी तौर पर ही सही, अपनाने को बचपन में बाध्य बना रहता था। इससे क्या संकेत लिया जा सकता है? विज्ञान का सत्य बड़ा है या सहज प्रेम का रस? या दोनों?

काले मेघा पानी दे

उन लोगों के दो नाम थे—इंदर सेना या मेढक-मंडली। बिलकुल एक-दूसरे के विपरीत। जो लोग उनके नग्नस्वरूप शरीर, उनकी उछलकूद, उनके शोर-शराबे और उनके कारण गली में होनेवाले कीचड़ काँदो से चिढ़ते थे, वे उन्हें कहते थे मेढक-मंडली। उनकी अगवानी गालियों से होती थी। वे होते थे दस-बारह बरस से सोलह-अठारह बरस के लड़के, साँवला नंगा बदन सिर्फ़ एक जाँघिया या कभी-कभी सिर्फ़ लंगोटी। एक जगह इकट्ठे होते थे। पहला जयकारा लगता था, "बोल गंगा मैया की जय।" जयकारा सुनते ही लोग सावधान हो जाते थे। स्त्रियाँ और लड़कियाँ छज्जे, बारजे से झाँकने लगती थीं और यह विचित्र नंग-धड़ंग टोली उछलती-कूदती समवेत पुकार लगाती थी:

काले मेघा पानी दे
गगरी फूटी बैल पियासा
पानी दे, गुड़धानी दे
काले मेघा पानी दे।

उछलते-कूदते, एक-दूसरे को धकियाते ये लोग गली में किसी दुमहले मकान के सामने रुक जाते, "पानी दे मैया, इंदर सेना आई है।" और जिन घरों में आखीर जेठ या शुरू आषाढ़ के उन सूखे दिनों में पानी की कमी भी होती थी, जिन घरों के कुएँ भी सूखे होते थे, उन घरों से भी सहेज कर रखे हुए पानी में से बाल्टी या घड़े भर-भर कर इन बच्चों को सर से पैर तक तर कर दिया जाता था। ये भीगे बदन मिट्टी में लोट लगाते थे, पानी फेंकने से पैदा हुए कीचड़ में लथपथ हो जाते थे। हाथ, पाँव, बदन, मुँह, पेट सब पर गंदा कीचड़ मल कर फिर हाँक लगाते "बोल गंगा मैया की जय" और फिर मंडली बाँध कर उछलते-कूदते अगले घर की ओर चल पड़ते बादलों को टेरते, "काले मेघा पानी दे।" वे सचमुच ऐसे दिन होते जब गली-मुहल्ला, गाँव-शहर हर जगह लोग गरमी में भुन-भुन कर त्राहिमाम कर रहे होते, जेठ के दसतपा बीत कर आषाढ़ का पहला पखवारा भी बीत चुका होता पर क्षितिज पर कहीं बादल की रेख भी नहीं दीखती होती, कुएँ सूखने लगते, नलों में एक तो बहुत कम पानी आता और आता भी तो आधी रात को भी मानो खौलता हुआ पानी

हो। शहरों की तुलना में गाँव में और भी हालत खराब होती थी। जहाँ जुताई होनी चाहिए वहाँ खेतों की मिट्टी सूख कर पत्थर हो जाती, फिर उसमें पपड़ी पड़ कर ज़मीन फटने लगती, लू ऐसी कि चलते-चलते आदमी आधे रास्ते में लू खा कर गिर पड़े। ढोर-ढंगर प्यास के मारे मरने लगते लेकिन बारिश का कहीं नाम निशान नहीं, ऐसे में पूजा-पाठ कथा-विधान सब करके लोग जब हार जाते तब अंतिम उपाय के रूप में निकलती यह इंदर सेना। वर्षा के बादलों के स्वामी, हैं इंद्र और इंद्र की सेना टोली बाँध कर कीचड़ में लथपथ निकलती, पुकारते हुए मेघों को, पानी माँगते हुए प्यासे गलों और सूखे खेतों के लिए। पानी की आशा पर जैसे सारा जीवन आकर टिक गया हो। बस एक बात मेरे समझ में नहीं आती थी कि जब चारों ओर पानी की इतनी कमी है तो लोग घर में इतनी कठिनाई से इकट्ठा करके रखा हुआ पानी बाल्टी भर-भर कर इन पर क्यों फेंकते हैं। कैसी निर्मम बरबादी है पानी की। देश

की कितनी क्षति होती है इस तरह के अंधविश्वासों से। कौन कहता है इन्हें इंद्र की सेना? अगर इंद्र महाराज से ये पानी दिलवा सकते हैं तो खुद अपने लिए पानी क्यों नहीं माँग लेते? क्यों मुहल्ले भर का पानी नष्ट करवाते घूमते हैं, नहीं यह सब पाखंड है। अंधविश्वास है। ऐसे ही अंधविश्वासों के कारण हम अंग्रेज़ों से पिछड़ गए और गुलाम बन गए।

मैं असल में था तो इन्हीं मेढक-मंडली वालों की उमर का, पर कुछ तो बचपन के आर्यसमाजी संस्कार थे और एक कुमार-सुधार सभा कायम हुई थी उसका उपमंत्री बना दिया गया था– सो समाज-सुधार का जोश कुछ ज़्यादा ही था। अंधविश्वासों के खिलाफ़ तो तरकस में तीर रख कर घूमता रहता था। मगर मुश्किल यह थी कि मुझे अपने बचपन में जिससे सबसे ज़्यादा प्यार मिला वे थीं जीजी। यूँ मेरी रिश्ते में कोई नहीं थीं। उम्र में मेरी माँ से भी बड़ी थीं, पर अपने लड़के-बहू सबको छोड़ कर उनके प्राण मुझी में बसते थे। और वे थीं उन तमाम रीति-रिवाजों, तीज-त्योहारों, पूजा-अनुष्ठानों की खान जिन्हें कुमार-सुधार सभा का यह उपमंत्री अंधविश्वास कहता था, और उन्हें जड़ से उखाड़ फेंकना चाहता था। पर मुश्किल यह थी कि उनका कोई पूजा-विधान, कोई त्योहार अनुष्ठान मेरे बिना पूरा नहीं होता था। दीवाली है तो गोबर और कौड़ियों से गोवर्धन और सतिया बनाने में लगा हूँ, जन्माष्टमी है तो रोज़ आठ दिन की झाँकी तक को सजाने और पँजीरी बाँटने में लगा हूँ, हर-छठ है तो छोटी रंगीन कुल्हियों में भूजा भर रहा हूँ। किसी में भुना चना, किसी में भुनी मटर, किसी में भुने अरवा चावल, किसी में भुना गेहूँ। जीजी यह सब मेरे हाथों से करातीं, ताकि उनका पुण्य मुझे मिले। केवल मुझे।

लेकिन इस बार मैंने साफ़ इनकार कर दिया। नहीं फेंकना है मुझे बाल्टी भर-भर कर पानी इस गंदी मेढक-मंडली पर। जब जीजी बाल्टी भर कर पानी ले गईं उनके बूढ़े पाँव डगमगा रहे थे, हाथ काँप रहे थे, तब भी मैं अलग मुँह फुलाए खड़ा रहा। शाम को उन्होंने लड्डू-मठरी खाने को दिए तो मैंने उन्हें हाथ से अलग खिसका दिया। मुँह फेरकर बैठ गया, जीजी से बोला भी नहीं। पहले वे भी तमतमाईं, लेकिन ज़्यादा देर तक उनसे गुस्सा नहीं रहा गया। पास आ कर मेरा सर अपनी गोद में लेकर बोलीं, "देख भइया रूठ मत। मेरी बात सुन। यह सब अंधविश्वास नहीं है। हम इन्हें पानी नहीं देंगे तो इंद्र भगवान हमें पानी कैसे देंगे?" मैं कुछ नहीं बोला। फिर जीजी बोलीं। "तू इसे पानी की बरबादी समझता है पर यह बरबादी नहीं है। यह पानी का अर्घ्य चढ़ाते हैं, जो चीज़ मनुष्य पाना चाहता है उसे पहले देगा नहीं तो पाएगा कैसे? इसीलिए ऋषि-मुनियों ने दान को सबसे ऊँचा स्थान दिया है।"

"ऋषि-मुनियों को काहे बदनाम करती हो जीजी? क्या उन्होंने कहा था कि जब आदमी बूँद-बूँद पानी को तरसे तब पानी कीचड़ में बहाओ।"

कुछ देर चुप रही जीजी, फिर मठरी मेरे मुँह में डालती हुई बोलीं, "देख बिना त्याग के दान नहीं होता। अगर तेरे पास लाखों-करोड़ों रुपये हैं और उसमें से तू दो-चार रुपये किसी को दे दे तो यह क्या त्याग हुआ। त्याग तो वह होता है कि जो चीज़ तेरे पास भी कम है, जिसकी तुझको भी ज़रूरत है तो अपनी ज़रूरत पीछे रख कर दूसरे के कल्याण के लिए उसे दे तो त्याग तो वह होता है, दान तो वह होता है, उसी का फल मिलता है।"

"फल-वल कुछ नहीं मिलता सब ढकोसला है।" मैंने कहा तो, पर कहीं मेरे तर्कों का किला पस्त होने लगा था। मगर मैं भी जिद्द पर अड़ा था।

फिर जीजी बोलीं, "देख तू तो अभी से पढ़-लिख गया है। मैंने तो गाँव के मदरसे का भी मुँह नहीं देखा। पर एक बात देखी है कि अगर तीस-चालीस मन गेहूँ उगाना है तो किसान पाँच-छह सेर अच्छा गेहूँ अपने पास से लेकर ज़मीन में क्यारियाँ बना कर फेंक देता है। उसे बुवाई कहते हैं। यह जो सूखे हम अपने घर का पानी इन पर फेंकते हैं वह भी बुवाई है। यह पानी गली में बोएँगे तो सारे शहर, कस्बा, गाँव पर पानीवाले बादलों की फसल आ जाएगी। हम बीज बनाकर पानी देते हैं, फिर काले मेघा से पानी माँगते हैं। सब ऋषि-मुनि कह गए हैं कि पहले खुद दो तब देवता तुम्हें चौगुना-अठगुना करके लौटाएँगे भइया, यह तो हर आदमी का आचरण है, जिससे सबका आचरण बनता है। यथा राजा तथा प्रजा सिर्फ़ यही सच नहीं है। सच यह भी है कि यथा प्रजा तथा राजा। यही तो गांधी जी महाराज कहते हैं।" जीजी का एक लड़का राष्ट्रीय आंदोलन में पुलिस की लाठी खा चुका था, तब से जीजी गांधी महाराज की बात अकसर करने लगी थीं।

इन बातों को आज पचास से ज़्यादा बरस होने को आए पर ज्यों की त्यों मन पर दर्ज हैं। कभी-कभी कैसे-कैसे संदर्भों में ये बातें मन को कचोट जाती हैं, हम आज देश के लिए करते क्या हैं? माँगें हर क्षेत्र में बड़ी-बड़ी हैं पर त्याग का कहीं नाम-निशान नहीं है। अपना स्वार्थ आज एकमात्र लक्ष्य रह गया है। हम चटखारे लेकर इसके या उसके भ्रष्टाचार की बातें करते हैं पर क्या कभी हमने जाँचा है कि अपने स्तर पर अपने दायरे में हम उसी भ्रष्टाचार के अंग तो नहीं बन रहे हैं? काले मेघा दल के दल उमड़ते हैं, पानी झमाझम बरसता है, पर गगरी फूटी की फूटी रह जाती है, बैल पियासे के पियासे रह जाते हैं? आखिर कब बदलेगी यह स्थिति?

अभ्यास
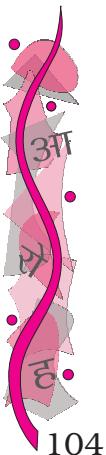
पाठ के साथ

1. लोगों ने लड़कों की टोली को ***मेढक-मंडली*** नाम किस आधार पर दिया? यह टोली अपने आपको ***इंदर सेना*** कहकर क्यों बुलाती थी?
2. जीजी ने ***इंदर सेना*** पर पानी फेंके जाने को किस तरह सही ठहराया?
3. ***पानी दे, गुड़धानी दे*** मेघों से पानी के साथ-साथ गुड़धानी की माँग क्यों की जा रही है?
4. ***गगरी फूटी बैल पियासा*** इंदर सेना के इस खेलगीत में बैलों के प्यासा रहने की बात क्यों मुखरित हुई है?
5. ***इंदर सेना*** सबसे पहले गंगा मैया की जय क्यों बोलती है? नदियों का भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश में क्या महत्त्व है?
6. रिश्तों में हमारी भावना-शक्ति का बँट जाना विश्वासों के जंगल में सत्य की राह खोजती हमारी बुद्धि की शक्ति को कमज़ोर करती है। पाठ में जीजी के प्रति लेखक की भावना के संदर्भ में इस कथन के औचित्य की समीक्षा कीजिए।

पाठ के आसपास

1. क्या ***इंदर सेना*** आज के युवा वर्ग का प्रेरणास्रोत हो सकती है? क्या आपके स्मृति-कोश में ऐसा कोई अनुभव है जब युवाओं ने संगठित होकर समाजोपयोगी रचनात्मक कार्य किया हो, उल्लेख करें।
2. तकनीकी विकास के दौर में भी भारत की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है। कृषि-समाज में चैत्र, वैशाख सभी माह बहुत महत्त्वपूर्ण हैं पर आषाढ़ का चढ़ना उनमें उल्लास क्यों भर देता है?
3. पाठ के संदर्भ में इसी पुस्तक में दी गई निराला की कविता ***बादल-राग*** पर विचार कीजिए और बताइए कि आपके जीवन में बादलों की क्या भूमिका है?
4. ***त्याग तो वह होता... उसी का फल मिलता है।*** अपने जीवन के किसी प्रसंग से इस सूक्ति की सार्थकता समझाइए।
5. ***पानी का संकट*** वर्तमान स्थिति में भी बहुत गहराया हुआ है। इसी तरह के पर्यावरण से संबद्ध अन्य संकटों के बारे में लिखिए।
6. आपकी ***दादी-नानी*** किस तरह के विश्वासों की बात करती हैं? ऐसी स्थिति में उनके प्रति आपका रवैया क्या होता है? लिखिए।

चर्चा करें

1. बादलों से संबंधित अपने-अपने क्षेत्र में प्रचलित गीतों का संकलन करें तथा कक्षा में चर्चा करें।
2. पिछले 15-20 सालों में पर्यावरण से छेड़-छाड़ के कारण भी प्रकृति-चक्र में बदलाव आया है, जिसका परिणाम मौसम का असंतुलन है। वर्तमान बाड़मेर (राजस्थान) में आई बाढ़, मुंबई की बाढ़ तथा महाराष्ट्र का भूकंप या फिर सुनामी भी इसी का नतीजा है। इस प्रकार की घटनाओं से जुड़ी सूचनाओं, चित्रों का संकलन कीजिए और एक प्रदर्शनी का आयोजन कीजिए, जिसमें ***बाज़ार दर्शन*** पाठ में बनाए गए विज्ञापनों को भी शामिल कर सकते हैं। और हाँ ऐसी स्थितियों से बचाव के उपाय पर पर्यावरण विशेषज्ञों की राय को प्रदर्शनी में मुख्य स्थान देना न भूलें।

विज्ञापन की दुनिया

1. 'पानी बचाओ' से जुड़े विज्ञापनों को एकत्र कीजिए। इस संकट के प्रति चेतावनी बरतने के लिए आप किस प्रकार का विज्ञापन बनाना चाहेंगे?

शब्द-छवि

गुड़धानी – गुड़ और चने से बना एक प्रकार का लड्डू
टेरते – पुकारते
दसतपा – तपते दस दिन
पखवारा – पंद्रह दिन की अवधि
ढोर-ढंगर – पशु
सतिया – स्वस्तिक चिह्न
अर्घ्य – जल चढ़ाना
अरवा चावल – ऐसा चावल जिसे धान को बिना उबाले निकाला गया हो
हर-छठ – जन्माष्टमी के दो दिन पूर्व मनाया जाने वाला पर्व (पूर्वी उत्तर प्रदेश से संबंधित)
भूजा – भुना हुआ अन्न
किला पस्त – हार जाना